Global Dimensions of Women's Liberation in Buddhism

Sweta Kumari
Ph.D. Scholar, Dr. B. A. K. Buddhist Studies Centre
Mahatma Gandhi Antarrashtriya Hindi Vishwavidyalaya, Wardha, Maharashtra – 442001

Abstract

The present research paper, titled "Global Dimensions of Women's Liberation in Buddhism," presents a historical and analytical study of the spiritual, social, cultural, and global roles of women within the Buddhist tradition. In contrast to the patriarchal society of the Later Vedic period, where the status of women had become increasingly limited and dependent, the emergence of Gautama Buddha in the 6th century BCE brought a message of equality, compassion, and spiritual freedom for women. The Buddha explicitly clarified that the potential for Nirvana and spiritual attainment is not restricted to men alone; rather, women are equally entitled to it. The establishment of the Bhikkhuni Sangha under the leadership of Mahapajapati Gotami was a revolutionary event in Buddhist history. Female practitioners such as Kisagotami, Ambapali, Patacara, and Bhadda Kundalakesa demonstrate that Buddhism evaluated spiritual worth based on practice and conduct. This study demonstrates that Buddhism presents a global model of women's liberation, encompassing principles of equal spiritual rights, social dignity, and cultural participation.

Keywords: Buddhism, Women's Liberation, Bhikkhuni Sangha, Mahapajapati Gotami, Therigatha, Vinaya Pitaka, Later Vedic Society, Patriarchy, Spiritual Equality, Nirvana, Women's Spiritual Practice, Social and Cultural Participation, Global Buddhist Tradition, Gender Equality, Human Rights.

बौद्ध धर्म में स्त्री-मुक्ति के वैश्विक आयाम

स्वेता कुमारी
पीएच.डी. शोधार्थी, म. गा. अ. हिन्दी विश्वविद्यालय वर्धा, महाराष्ट्र – 442001

सारांशिका

प्रस्तुत शोधपत्र "बौद्ध धर्म में स्त्री-मुक्ति के वैश्विक आयाम" बौद्ध परम्परा में स्त्रियों की आध्यात्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और वैश्विक भूमिका का ऐतिहासिक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। उत्तरवैदिक कालीन पितृसत्तात्मक समाज में जहाँ स्त्रियों की स्थिति क्रमशः सीमित और आश्रित होती चली गई थी, वहीं छठी शताब्दी ईसा पूर्व में गौतम बुद्ध का उदय स्त्रियों के लिए समानता, करुणा और आध्यात्मिक स्वतन्त्रता का संदेश लेकर आया। बुद्ध ने यह स्पष्ट किया कि निर्वाण और आध्यात्मिक उपलब्धि की सम्भावना केवल पुरुषों तक सीमित नहीं है, बल्कि स्त्रियाँ भी समान रूप से उसकी अधिकारी हैं।

महापजापति गोतमी के नेतृत्व में भिक्षुणी सङ्घ की स्थापना बौद्ध इतिहास की एक क्रान्तिकारी घटना थी, जिसने स्त्रियों को संगठित धार्मिक जीवन, साधना और शिक्षा का अवसर प्रदान किया। विनयपिटक में वर्णित भिक्षुणी-नियमों तथा थेरीगाथा में सङ्कलित भिक्षुणियों के पद्यों के माध्यम से स्त्रियों के आत्मानुभव, संघर्ष और मुक्ति की सशक्त अभिव्यक्ति सामने आती है। किसागोतमी, अम्बपाली, पटाचारा और भद्दा कुण्डलकेसा जैसी साधिकाएँ यह प्रमाणित करती हैं कि बौद्ध धर्म ने सामाजिक पृष्ठभूमि या लिङ्ग के आधार पर नहीं, बल्कि साधना और आचरण के आधार पर आध्यात्मिक मूल्याङ्कन किया।

शोधपत्र में यह भी प्रतिपादित किया गया है कि बौद्ध धर्म ने स्त्रियों को केवल आध्यात्मिक ही नहीं, बल्कि सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और अप्रत्यक्ष राजनीतिक क्षेत्रों में भी सक्रिय भूमिका निभाने का अवसर दिया। बौद्ध धर्म के एशिया के विभिन्न देशों श्रीलंका, म्यांमार, थाईलैंड, चीन, जापान और तिब्बत में प्रसार के साथ स्त्री-मुक्ति की यह अवधारणा वैश्विक स्वरूप ग्रहण करती है।

निष्कर्षतः यह अध्ययन दर्शाता है कि बौद्ध धर्म स्त्री-मुक्ति का एक ऐसा वैश्विक मॉडल प्रस्तुत करता है, जिसमें समान आध्यात्मिक अधिकार, सामाजिक सम्मान और सांस्कृतिक सहभागिता के सिद्धान्त निहित हैं। आधुनिक स्त्री-मुक्ति और लैङ्गिक समानता के विमर्श में भी बौद्ध दृष्टिकोण आज प्रासङ्गिक और प्रेरणास्रोत बना हुआ है।

प्रमुख शब्दावलियाँ : बौद्ध धर्म, स्त्री-मुक्ति, भिक्षुणी सङ्घ, महापजापति गोतमी, थेरीगाथा, विनयपिटक, उत्तरवैदिक समाज, पितृसत्ता, आध्यात्मिक समानता, निर्वाण, स्त्री-साधना, सामाजिक एवं सांस्कृतिक सहभागिता, वैश्विक बौद्ध परम्परा, लैङ्गिक समानता, मानवाधिकार।

भूमिका एवं ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

मानव सभ्यता का आरम्भ ही स्त्री और पुरुष की साझी भूमिका पर आधारित है। दोनों की पारस्परिक सहभागिता ने ही समाज को संरचना और निरन्तरता दी है। किन्तु यह भी एक ऐतिहासिक तथ्य है कि समय के साथ समाज का ढांचा पितृसत्तात्मक होता गया, जिसमें स्त्रियों की स्थिति क्रमशः उपेक्षित और गौण मानी जाने लगी। उत्तरवैदिक काल तक आते-आते भारतीय समाज में स्त्रियों के अधिकारों और स्वतन्त्रता में भारी ह्रास हुआ। विवाह, परिवार, और सामाजिक परम्पराओं के क्षेत्र में स्त्रियों को पुरुषों पर पूर्णतः आश्रित समझा जाने लगा। धार्मिक अनुष्ठानों से लेकर शैक्षणिक अवसरों तक, स्त्रियों की भागीदारी सीमित होती गई। इस प्रकार स्त्री-जीवन को गृहस्थी और मातृत्व तक ही सीमित करने का प्रयास हुआ।

ऐसे ऐतिहासिक परिदृश्य में छठी शताब्दी ईसा पूर्व में गौतम बुद्ध का प्रादुर्भाव हुआ। बुद्ध का आगमन केवल एक धार्मिक घटना नहीं थी, बल्कि यह सामाजिक और सांस्कृतिक क्रान्ति का भी प्रतीक था। बुद्ध ने उस समय की प्रचलित परम्पराओं और सामाजिक अन्यायों को चुनौती दी और मानवता के लिए करुणा, समानता और स्वतन्त्रता का सन्देश दिया। स्त्रियों के प्रति उनका दृष्टिकोण तत्कालीन समाज से भिन्न और अधिक मानवीय था। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि मोक्ष या निर्वाण की सम्भावना केवल पुरुषों तक सीमित नहीं है, बल्कि स्त्रियाँ भी समान रूप से उसकी अधिकारी हैं।

उत्तरवैदिक काल में स्त्रियों की स्थिति

ऋग्वैदिक काल में कुछ प्रमाण मिलते हैं कि स्त्रियाँ विदुषी, कवयित्री और शास्त्रार्थ में भाग लेने वाली थीं। परन्तु उत्तरवैदिक समाज में उनकी स्थिति क्रमशः निम्न होती गई। मनुस्मृति जैसे ग्रन्थों में स्त्रियों के लिए कठोर मर्यादाएँ और प्रतिबन्ध देखने को मिलते हैं, जिनमें यह विचार प्रकट होता है कि स्त्रियों को आजीवन पुरुषों (पिता, पति और पुत्र) पर निर्भर रहना चाहिए।[1] इस प्रकार धार्मिक और सामाजिक स्तर पर स्त्रियों की स्वतन्त्रता का ह्रास हुआ।

बुद्ध का आगमन और स्त्री-स्वतन्त्रता का उद्घोष

गौतम बुद्ध ने स्त्रियों की स्थिति को केवल सामाजिक दृष्टि से ही नहीं देखा, बल्कि आध्यात्मिक दृष्टिकोण से भी उसका पुनर्मूल्याङ्कन किया। उन्होंने स्त्रियों के लिए भी सङ्घ में प्रवेश का मार्ग प्रशस्त किया। प्रारम्भ में बुद्ध ने स्त्रियों को सङ्घ में प्रवेश देने में संकोच किया था, किन्तु महापजापति गोतमी, जो बुद्ध की मौसी और पालनकर्ता माता थीं, के आग्रह पर एवं आनन्द के साथ विमर्श के पश्चात उन्होंने स्त्रियों के लिए बौद्ध सङ्घ के द्वार खोल दिए।[2]
भिक्षुणी सङ्घ की स्थापना बौद्ध धर्म के इतिहास में एक क्रान्तिकारी घटना थी। यह पहली बार हुआ कि किसी धार्मिक परम्परा में स्त्रियों को न केवल संन्यास लेने का अवसर दिया गया, बल्कि उन्हें सङ्घ के माध्यम से संगठनबद्ध रूप से आध्यात्मिक साधना करने की स्वतन्त्रता भी प्राप्त हुई।

महापजापति गोतमी और भिक्षुणी सङ्घ

महापजापति गोतमी का योगदान विशेष रूप से उल्लेखनीय है। वे पहली महिला बनीं जिन्होंने सङ्घ में दीक्षा लेकर स्त्रियों के लिए धार्मिक जीवन के द्वार खोले। विनयपिटक के अनुसार, बुद्ध ने भिक्षुणी सङ्घ की स्थापना के समय आठ विशेष नियम (गुरुधम्म) निर्धारित किए थे, जिनका पालन भिक्षुणियों को करना अनिवार्य था।[3] इन नियमों में भले ही भिक्षुणियों को भिक्षुओं से एक स्तर नीचे रखा गया हो, किन्तु फिर भी इस व्यवस्था ने स्त्रियों को उस धार्मिक जीवन में प्रवेश करने का अवसर दिया जिससे वे अब तक वंचित थीं।

थेरीगाथा और स्त्री-साधिकाओं का योगदान

स्त्रियों के आध्यात्मिक अनुभवों का सबसे जीवन्त चित्रणथेरीगाथा में मिलता है। यह ग्रन्थ पालि तिपिटक (खुद्दकनिकाय) का एक अङ्ग है, जिसमें 73 भिक्षुणियों के 524 पद्य संकलित हैं।[4] इन पद्यों में स्त्रियों ने अपने आत्मानुभव, जीवन-संघर्ष और निर्वाण की प्राप्ति का उल्लेख किया है। थेरीगाथा बौद्ध-साहित्य में स्त्री-स्वर को अभिव्यक्त करने वाला अद्वितीय ग्रन्थ है। इसमें अनेक नारी साधिकाओं ने अपने वैवाहिक जीवन की पीड़ाओं, सांसारिक बन्धनों और आत्मिक संघर्षों का उल्लेख करते हुए यह दर्शाया है कि उन्होंने बुद्ध के मार्ग पर चलकर मुक्ति प्राप्त की।

उदाहरण के लिए, किसागोतमी की कथा प्रसिद्ध है, जिन्हें अपने पुत्र की मृत्यु के पश्चात शोकातुर अवस्था में बुद्ध की शरण में आना पड़ा। बुद्ध ने उन्हें 'संसार की अनित्यता' का बोध कराया। बाद में किसागोतमी भिक्षुणी बनीं और उन्होंने निर्वाण प्राप्त किया।[5] इसी प्रकारअम्बपाली, जो प्रारम्भ में वैशाली की गणिका थीं, ने बुद्ध से प्रभावित होकर सङ्घ में प्रवेश किया और उच्च कोटि की साधिका बनीं।[6]

बौद्ध दृष्टि से स्त्री की आध्यात्मिक योग्यता

बुद्ध ने स्पष्ट किया कि स्त्रियों और पुरुषों में आध्यात्मिक मुक्ति की क्षमता में कोई भेद नहीं है। संयुत्तनिकाय में बुद्ध कहते हैं कि, "जैसे पुरुष आर्य-अष्टाङ्गिक-मार्ग का अभ्यास करके निर्वाण प्राप्त कर सकता है, वैसे ही स्त्री भी कर सकती है"।[7] इस कथन से यह प्रमाणित होता है कि बौद्ध धर्म ने स्त्री को मोक्ष की पूर्ण अधिकारी माना।

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि उत्तरवैदिक काल की पितृसत्तात्मक व्यवस्था में जहाँ स्त्रियों की स्थिति क्रमशः दीन और गौण होती जा रही थी, वहीं गौतम बुद्ध ने स्त्रियों के लिए समान आध्यात्मिक अधिकारों की उद्घोषणा की। महापजापति गोतमी के नेतृत्व में भिक्षुणी सङ्घ की स्थापना औरथेरीगाथा जैसी रचनाओं के माध्यम से स्त्रियों ने अपनी आत्मकथाओं को स्वर दिया। इस ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य ने न केवल तत्कालीन भारतीय समाज में स्त्री की स्थिति को बदला, बल्कि आगे चलकर वैश्विक स्तर पर स्त्री-मुक्ति की धारणा के लिए आधारशिला रखी।

बौद्ध धर्म में स्त्री-मुक्ति की अवधारणा

गौतम बुद्ध का समूचा दर्शन सम्यक् दृष्टि, सम्यक् आचरण और सम्यक् साधना पर आधारित है। उन्होंने मनुष्य के उद्धार के लिए आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग को मार्गदर्शक बनाया। यह मार्ग केवल पुरुषों के लिए ही नहीं, बल्कि स्त्रियों के लिए भी उतना ही सुलभ और समान रूप से फलदायी है। बुद्ध के उपदेशों और आचरण से यह स्पष्ट होता है कि उन्होंने स्त्रियों को न केवल आध्यात्मिक साधना में सक्षम माना, बल्कि उन्हें सामाजिक, शैक्षिक और नैतिक स्तर पर समान अधिकार प्रदान करने की दिशा भी दिखाई।

1. **निर्वाण की समान सम्भावना** : बुद्ध का मानना था कि स्त्रियाँ भी पुरुषों की तरह निर्वाण प्राप्त कर सकती हैं। संयुत्तनिकाय में बुद्ध ने स्पष्ट रूप से कहा है – "जैसे पुरुष आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग का अभ्यास कर अरहत पद प्राप्त कर सकता है, वैसे ही स्त्री भी प्राप्त कर सकती है"[8]। यह कथन बौद्ध धर्म की स्त्रीवादी दृष्टि को स्पष्ट करता है कि आध्यात्मिक प्रगति में किसी भी प्रकार का लिङ्ग-भेद नहीं है।
2. **महापजापति गोतमी का योगदान** : महापजापति गोतमी केवल पहली भिक्षुणी ही नहीं थीं, बल्कि स्त्री-मुक्ति की अवधारणा की जीवन्त प्रतिमूर्ति थीं। उनके सङ्घ में प्रवेश ने अन्य स्त्रियों को भी मार्ग प्रशस्त किया। विनयपिटक में वर्णित 'आठ गुरुधम्म' ने भले ही भिक्षुणियों को भिक्षुओं से एक स्तर नीचे रखा, किन्तु इसके बावजूद यह व्यवस्था ऐतिहासिक दृष्टि से क्रान्तिकारी थी।[9] इसके माध्यम से पहली बार स्त्रियों को संगठित रूप से धार्मिक जीवन अपनाने और आध्यात्मिक साधना का अवसर मिला।
3. **थेरीगाथा (स्त्री-मुक्ति का स्वर)** : थेरीगाथा स्त्रियों के आध्यात्मिक जीवन का अद्वितीय दस्तावेज है। इसमें 73 भिक्षुणियों के 524 पद्य संकलित हैं, जिनमें वे अपने जीवन की यात्रा, संसार की पीड़ाओं और निर्वाण की उपलब्धि का वर्णन करती हैं।[10] यह ग्रन्थ इस बात का प्रमाण है कि स्त्रियों ने बुद्ध के मार्ग का अनुसरण करके मुक्ति पाई और समाज को यह सन्देश दिया कि वे किसी भी रूप से पुरुषों से कम नहीं हैं। थेरीगाथा में वर्णित कुछ भिक्खुनियों (स्त्रियों) के उदाहरण नीचे दिए गए हैं -

(क) **किसागोतमी** : किसागोतमी का जीवन अत्यन्त मार्मिक है। अपने पुत्र की मृत्यु के शोक से व्याकुल होकर जब वह बुद्ध के पास पहुँचीं, तब उन्हें बोध हुआ कि 'मृत्यु सार्वभौमिक सत्य है'। बाद में उन्होंने दीक्षा लेकर भिक्षुणी बनी और निर्वाण प्राप्त किया।[11]

(ख) **अम्बपाली** : वैशाली की गणिका अम्बपाली का जीवन परिवर्तन बौद्ध धर्म में स्त्री-मुक्ति का महत्वपूर्ण उदाहरण है। बुद्ध के उपदेशों से प्रभावित होकर उन्होंने सङ्घ में प्रवेश लिया और उच्च कोटि की साधिका बनीं। उनके जीवन से यह स्पष्ट होता है कि बौद्ध धर्म में नारी को उसकी सामाजिक पृष्ठभूमि के आधार पर नहीं, बल्कि उसकी साधना और आचरण के आधार पर किया जाता था।[12]

(ग) **भद्दा कुण्डलकेसा** : भद्दा कुण्डलकेसा पहले एक जैन साध्वी थीं, लेकिन बाद में बुद्ध की शरण में आईं और सङ्घ में सम्मिलित हुईं। वे शास्त्रार्थ और काव्य-रचना में निपुण थीं। उनके पद्यों से यह स्पष्ट होता है कि बौद्ध धर्म ने स्त्रियों को बौद्धिक और रचनात्मक अभिव्यक्ति का अवसर दिया।[13]

4. **स्त्रियाँ आचार्या और उपाध्याया के रूप में** : बौद्ध धर्म में स्त्रियों को 'आचार्या' और 'उपाध्याया' जैसे पद प्राप्त हुए। भिक्षुणी सङ्घ में वरिष्ठ भिक्षुणियाँ कनिष्ठ भिक्षुणियों को शिक्षा और दीक्षा देती थीं।[14] यह व्यवस्था न केवल स्त्रियों की आध्यात्मिक उन्नति को दर्शाती है, बल्कि उनकी शैक्षणिक और बौद्धिक भूमिका को भी उजागर करती है।

5. **स्त्रियों की सामाजिक मुक्ति** : बुद्ध ने केवल आध्यात्मिक ही नहीं, बल्कि सामाजिक स्तर पर भी स्त्रियों के सम्मान और अधिकारों की बात की। सिगालोवाद सुत्त में उन्होंने पति को यह उपदेश दिया कि वह अपनी पत्नी का सम्मान करे, उसके प्रति विश्वास रखे, उसे अधिकार दे और उसके साथ सौहार्दपूर्ण व्यवहार करे।[15] यह उपदेश उस समय के पितृसत्तात्मक समाज के लिए अत्यन्त प्रगतिशील था।

6. **स्त्री-मुक्ति की वैश्विक अवधारणा की नींव** : बौद्ध धर्म में स्त्री-मुक्ति केवल भारतीय समाज तक सीमित नहीं रही। जब बौद्ध धर्म का प्रसार श्रीलंका, म्यांमार, चीन, जापान और तिब्बत में हुआ, तो वहाँ भी स्त्रियों के लिए शिक्षा और आध्यात्मिक अवसर उपलब्ध हुए। स्त्रियों के सङ्घ ने स्थानीय समाजों में शिक्षा, करुणा और सामाजिक कल्याण के कार्यों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस प्रकार बुद्ध द्वारा प्रतिपादित समानता का सिद्धान्त आगे चलकर वैश्विक स्त्री-मुक्ति की धारणा का आधार बना।

बुद्ध की शिक्षाओं ने यह सिद्ध कर दिया कि स्त्री-पुरुष समान रूप से आध्यात्मिक साधना और निर्वाण की अधिकारी हैं। महापजापति गोतमी, किसागोतमी, अम्बपाली और भद्दा कुण्डलकेसा जैसी साधिकाओं ने न केवल अपने जीवन से इस सत्य को प्रमाणित किया, बल्कि भावी पीढ़ियों के लिए स्त्री-मुक्ति की मिसाल प्रस्तुत की। थेरीगाथा जैसे ग्रन्थ बौद्ध धर्म में स्त्रियों की आवाज़ को अमर करते हैं। सामाजिक दृष्टि से भी बुद्ध ने स्त्रियों के सम्मान और अधिकारों की जो उद्घोषणा की, उसने आगे चलकर वैश्विक स्त्री-मुक्ति आंदोलन के लिए आधारभूमि तैयार की।

थेरीगाथा एवं स्त्रियों के उद्गार

पालि तिपिटक का 'थेरीगाथा' ग्रन्थ विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इसमें 73 भिक्षुणियों के 524 पद्य संग्रहीत हैं, जो उनकी साधना, अनुभव और निर्वाण की उपलब्धियों का साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं।[16] इसमें अम्बपाली, पटाचारा, किसागोतमी, खेमा जैसी भिक्षुणियों की मार्मिक और प्रेरक गाथाएँ मिलती हैं। थेरीगाथा यह प्रमाणित करती है कि स्त्रियाँ केवल गृहस्थ धर्म तक सीमित न रहकर उच्चतम आध्यात्मिक लक्ष्यों तक पहुँचने में सक्षम थीं। यह उस काल की पितृसत्तात्मक धारणाओं के लिए चुनौतीपूर्ण था।

विनयपिटक और स्त्रियों के नियम

विनयपिटक में भिक्षुणियों के लिए आचार-संहिता का विस्तृत वर्णन मिलता है।[17] यद्यपि कुछ नियम स्त्रियों पर अधिक नियन्त्रण लगाते हैं, जैसे कि- भिक्षुणी चाहे कितनी भी वरिष्ठ क्यों न हो, उसे कनिष्ठ भिक्षु तक की वन्दना करनी होगी, फिर भी इन नियमों ने स्त्रियों को सङ्घ का अङ्ग बनाया और उन्हें साधना के लिए संरचित जीवन प्रदान किया।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि बुद्ध के आगमन से पूर्व स्त्रियों की स्थिति उत्तरवैदिक काल में अवनति को प्राप्त हो चुकी थी। किन्तु बुद्ध ने अपने करुणामय दृष्टिकोण और उदार नीतियों के माध्यम से स्त्रियों को न केवल सामाजिक सम्मान दिलाया बल्कि आध्यात्मिक उत्थान का मार्ग भी प्रशस्त किया। भिक्षुणी सङ्घ की स्थापना, थेरीगाथा में भिक्षुणियों के उद्गार और विनयपिटक में उनके लिए आचार-संहिता, ये सभी इस तथ्य को पुष्ट करते हैं कि बौद्ध धर्म ने स्त्रियों को आध्यात्मिक क्षेत्र में पुरुषों के समान अवसर प्रदान किए।

सामाजिक एवं आर्थिक परिप्रेक्ष्य

1. **सामाजिक परिप्रेक्ष्य** : बौद्ध धर्म के उदय का एक महत्वपूर्ण वैश्विक आयाम यह है कि उसने स्त्रियों को केवल गृहस्थ जीवन तक सीमित नहीं रखा, बल्कि उन्हें आध्यात्मिक और सामाजिक जीवन में सक्रिय भागीदारी का अवसर भी प्रदान किया। उत्तरवैदिक समाज में स्त्रियों की स्थिति अपेक्षाकृत निम्न थी। वे मुख्यतः विवाह, मातृत्व और पारिवारिक दायित्वों तक सीमित थीं। विवाह के बाद स्त्री की स्वतन्त्रता लगभग समाप्त हो जाती थी और उसका जीवन पति व परिवार पर आश्रित हो जाता था। किन्तु बौद्ध धर्म ने इस प्रवृत्ति को चुनौती दी और स्त्रियों को सङ्घ में प्रवेश का मार्ग देकर सामाजिक सम्मान दिलाया।

गृहस्थ जीवन में भी स्त्रियाँ समाज में प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त कर सकती थीं। अङ्गुत्तरनिकाय में विसाखा नामक धनाढ्य स्त्री का उल्लेख है, जो अपनी दानशीलता और भिक्षुणी सङ्घ के सहयोग के लिए प्रसिद्ध थीं।[18] इसी प्रकार वैशाली की गणिका अम्बपाली ने भी बुद्ध और सङ्घ को उद्यान दान दिया। इससे यह स्पष्ट होता है कि स्त्रियाँ केवल पारिवारिक जीवन तक सीमित न रहकर सार्वजनिक जीवन और धार्मिक कार्यों में भी सक्रिय भागीदारी निभा रही थीं।

2. **आर्थिक परिप्रेक्ष्य** : आर्थिक दृष्टि से देखा जाए तो बौद्ध धर्म ने स्त्रियों को अपेक्षाकृत अधिक स्वतन्त्रता और सम्मान दिया। गृहस्थ स्त्रियाँ पारिवारिक धन-संपत्ति के प्रबन्धन में भूमिका निभाती थीं। विसाखा का उदाहरण इस तथ्य को पुष्ट करता है कि स्त्रियाँ व्यापारिक, दानशीलता और सामाजिक गतिविधियों में पुरुषों की बराबरी करती थीं।

विनयपिटक में उल्लेख है कि भिक्षुणियाँ भिक्षाटन से जीवन-निर्वाह करती थीं और सङ्घ की आवश्यकताओं की पूर्ति गृहस्थ समुदाय द्वारा की जाती थी।[19] गृहस्थ स्त्रियाँ सङ्घ को दान देती थीं, वस्त्र, भोजन और औषधियाँ उपलब्ध कराती थीं। भिक्षुणियों की आर्थिक स्थिति भी दान-दक्षिणा पर आधारित थी। सङ्घ में उनके लिए पृथक नियम बनाए गए ताकि वे भिक्षाटन और दान पर निर्भर रहते हुए भी गरिमा बनाए रख सकें। यह सुनिश्चित किया गया कि उन्हें भोजन, वस्त्र और दवाओं जैसी आवश्यक सुविधाओं से वंचित न रहना पड़े। यह आर्थिक सहभागिता स्त्रियों की धार्मिक प्रतिष्ठा को भी बढ़ाती थी। कुछ स्त्रियाँ स्वयं भी धन का स्वामित्व रखती थीं और अपनी इच्छा से उसका उपयोग करती थीं। अम्बपाली ने अपने निजी उपवन को बुद्ध और सङ्घ को दान कर दिया, जो इस बात का प्रमाण है कि स्त्रियाँ सम्पत्ति की वैध स्वामिनी हो सकती थीं और उसका उपयोग धार्मिक या सामाजिक कल्याण के लिए कर सकती थीं।[20]

सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से बौद्ध धर्म ने स्त्रियों को एक नई पहचान और स्वतन्त्रता प्रदान की। उन्होंने विवाह और परिवार की परम्परागत भूमिकाओं से आगे बढ़कर आध्यात्मिक और सामाजिक क्षेत्रों में भी योगदान दिया। विसाखा, अम्बपाली, महापजापति गौतमी और अनेक भिक्षुणियाँ इस प्रक्रिया की जीवित प्रतीक हैं। बुद्ध का यह दृष्टिकोण न केवल तत्कालीन भारतीय समाज में, बल्कि वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भी स्त्री मुक्ति के लिए महत्वपूर्ण प्रेरणा बना। इससे स्त्रियों के लिए शिक्षा, दान, धार्मिक गतिविधियों और सार्वजनिक जीवन में सक्रिय भागीदारी के अवसर खुले।

राजनीतिक एवं सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य

1. **राजनीतिक परिप्रेक्ष्य** : बौद्ध धर्म का उदय ऐसे समय हुआ जब स्त्रियों की राजनीतिक भूमिका लगभग नगण्य थी। वैदिक और उत्तरवैदिक समाज में स्त्रियाँ कभी-कभार यज्ञों में सहगामिनी के रूप में दिखाई देती थीं, परन्तु वे प्रत्यक्ष रूप से राज्य-सत्ता में भागीदार नहीं थीं। पितृसत्तात्मक व्यवस्था ने उन्हें मुख्यतः पारिवारिक और गृहस्थ भूमिकाओं तक सीमित रखा। किन्तु बुद्ध के समय आते-आते स्त्रियाँ जनजीवन और सत्ता के व्यापक ढाँचे में दिखाई देने लगीं। विशेषकर गणराज्यों (वैशाली, कपिलवस्तु आदि) में कुछ प्रभावशाली स्त्रियाँ अपनी सम्पत्ति, दानशीलता और धार्मिक प्रतिष्ठा के कारण राजनीतिक पहचान भी प्राप्त कर सकीं।

अम्बपाली, वैशाली की प्रसिद्ध गणिका, इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है। उसने बुद्ध और सङ्घ को अपना उपवन दान किया, जिसे 'अम्बपाली वन' के नाम से जाना जाता है।[21] यह घटना न केवल धार्मिक, बल्कि राजनीतिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण थी, क्योंकि गणिका का सम्मानित होकर सङ्घ के साथ जुड़ना स्त्रियों की सामाजिक-राजनीतिक शक्ति को दर्शाता है। इसी प्रकार विसाखा, श्रावस्ती की एक प्रतिष्ठित गृहिणी, ने भी बुद्ध के सङ्घ के लिए अनेक विहारों का निर्माण कराया और बार-बार सङ्घ की आवश्यकताओं की पूर्ति की।[22] उसकी भूमिका केवल दानशीलता तक सीमित नहीं रही, बल्कि वह सङ्घ-जीवन की नीतियों पर भी अपना मत व्यक्त करती थी। उसकी सक्रियता से स्पष्ट होता है कि स्त्रियाँ धार्मिक और सामाजिक संरचना में निर्णायक भूमिका निभा सकती थीं, जो अप्रत्यक्ष रूप से राजनीतिक प्रभाव भी उत्पन्न करती थी।

सङ्घ के संगठन में भी स्त्रियों को कुछ अधिकार प्राप्त थे। विनयपिटक में भिक्षुणियों के लिए पृथक नियमावली बनाई गई, जिसमें यह सुनिश्चित किया गया कि वे अपनी अनुशासन-व्यवस्था स्वयं सम्भाल सकें।[23] यद्यपि उन्हें भिक्षुओं के अधीन रहना पड़ता था, परन्तु उनका स्वतन्त्र संगठन होना राजनीतिक दृष्टि से क्रान्तिकारी माना जा सकता है। इस प्रकार बौद्ध धर्म ने स्त्रियों को प्रत्यक्ष रूप से शासन-सत्ता नहीं दी, किन्तु उन्हें धार्मिक और सामाजिक संरचना के माध्यम से अप्रत्यक्ष राजनीतिक शक्ति प्राप्त हुई।

2. **सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य** : बौद्ध धर्म का सबसे गहरा प्रभाव सांस्कृतिक क्षेत्र में दिखाई देता है। बुद्ध के समय में स्त्रियों की शिक्षा लगभग उपेक्षित थी, किन्तु सङ्घ में प्रवेश के बाद उन्हें शिक्षा और साधना के नए अवसर मिले।

(क) **शिक्षा और साहित्य** : थेरीगाथा इसका सबसे बड़ा उदाहरण है। इसमें भिक्षुणियों की आत्मानुभूतियाँ, जीवन-संघर्ष और आध्यात्मिक उपलब्धियाँ काव्य के रूप में सङ्कलित हैं। इसमें शामिल स्त्रियाँ न केवल साधना में निपुण थीं, बल्कि उन्होंने काव्य-प्रतिभा और वैचारिक गहराई का परिचय भी दिया।[24] यह बौद्ध संस्कृति में स्त्रियों की बौद्धिक भागीदारी का प्रमाण है।

(ख) **कला और सांस्कृतिक चेतना** : बौद्ध कला और स्थापत्य में भी स्त्रियों का अप्रत्यक्ष योगदान रहा। अम्बपाली और विसाखा जैसी स्त्रियों के दान से निर्मित विहार, स्तूप और उद्यान बौद्ध संस्कृति की धरोहर बने। स्त्रियाँ केवल उपभोक्ता ही नहीं, बल्कि संरक्षक और प्रेरक भी थीं। भिक्षुणियाँ अपने उपदेशों और गीतों के माध्यम से सांस्कृतिक चेतना का प्रसार करती थीं। उदाहरणस्वरूप भिक्षुणी पटाचारा ने व्यक्तिगत दुःख से उबरकर समाज में नैतिक जीवन का संदेश फैलाया।[25]

(ग) **वैश्विक सांस्कृतिक प्रभाव** : बौद्ध धर्म जब एशिया के अन्य देशों में पहुँचा, तो स्त्रियों की सांस्कृतिक भूमिका और भी विस्तृत हो गई।

- चीन में भिक्षुणी सङ्घ की स्थापना पाँचवीं शताब्दी में हुई और वहाँ स्त्रियों ने बौद्ध शिक्षा और अनुवाद कार्यों में सक्रिय योगदान दिया।
- जापान में भिक्षुणियों ने न केवल धार्मिक साधना की, बल्कि संगीत और चित्रकला जैसी कलाओं में भी भूमिका निभाई।

- तिब्बत में योगिनियों और तांत्रिक साधिकाओं ने बौद्ध संस्कृति को विशिष्ट आयाम प्रदान किया। आज भी कई तिब्बती भिक्षुणियाँ उच्च पदों पर प्रतिष्ठित हैं।[26]

राजनीतिक और सांस्कृतिक दृष्टि से बौद्ध धर्म ने स्त्रियों के लिए नए अवसर खोले। उन्होंने दानशीलता, सङ्घ-संगठन और शिक्षण-अध्यापन के माध्यम से राजनीतिक पहचान बनाई और काव्य, साहित्य, कला तथा अध्यापन द्वारा सांस्कृतिक चेतना का प्रसार किया। यह स्त्री-मुक्ति के वैश्विक आयामों का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष है।

आध्यात्मिक परिप्रेक्ष्य और स्त्री-मुक्ति का वैश्विक प्रभाव

1. **आध्यात्मिक परिप्रेक्ष्य** : बौद्ध धर्म की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमें सभी जीवों को दुःख-निवारण और निर्वाण प्राप्ति का समान अवसर प्राप्त है। बुद्ध ने स्पष्ट किया कि पुरुष और स्त्री दोनों ही सम्यक् मार्ग का पालन करके अरहत्त्व और निर्वाण प्राप्त कर सकते हैं।[27] यह दृष्टिकोण उस समय के पितृसत्तात्मक समाज में क्रान्तिकारी था।

भिक्षुणियों को सङ्घ में प्रवेश देने के पश्चात् उन्हें सम्यक् साधना के अवसर उपलब्ध हुए। विनयपिटक के अनुसार भिक्षुणियों को ध्यान, शील और प्रज्ञा की साधना में पुरुषों के समान प्रशिक्षण दिया गया।[28] थेरीगाथा में भिक्षुणियों के अनुभव स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि स्त्रियाँ केवल गृहस्थ जीवन की सीमाओं तक सीमित नहीं थीं, बल्कि उन्होंने उच्चतम आध्यात्मिक लक्ष्य प्राप्त किया।[29] किसागोतमी का उदाहरण इस दृष्टि से अत्यन्त प्रेरक है। उसने अपने पुत्र की मृत्यु के बाद बुद्ध की शरण में आकर सत्य का बोध प्राप्त किया। उसके अनुभव ने यह प्रमाणित किया कि स्त्रियाँ भी दुःख, करुणा और ध्यान के माध्यम से पूर्ण आध्यात्मिक मुक्ति प्राप्त कर सकती हैं।[30]

भिक्षुणियों की साधना में ध्यान, प्रज्ञा, विनय और करुणा के चार स्तम्भ शामिल थे। उन्हें सङ्घ की अनुशासन व्यवस्था का पालन करना पड़ता था, परन्तु इसके बावजूद उनकी साधना स्वतन्त्र और गहन होती थी। आचार्या के रूप में भिक्षुणियाँ अन्य भिक्षुणियों और गृहस्थों को शिक्षित करती थीं, जिससे आध्यात्मिक ज्ञान का प्रसार भी सुनिश्चित होता था।[31]

2. **वैश्विक प्रभाव** : बौद्ध धर्म के प्रसार के साथ स्त्री-मुक्ति का प्रभाव एशिया के विभिन्न देशों में भी देखने को मिलता है।

(क) **श्रीलंका, म्यांमार, थाईलैंड** : श्रीलंका में भिक्षुणी सङ्घ की स्थापना प्राचीन काल से हुई थी। भिक्षुणियों को शिक्षा और साधना के अवसर प्राप्त थे। म्यांमार और थाईलैंड में भी भिक्षुणियाँ भिक्षाटन और शिक्षा कार्य में सक्रिय रही हैं। यहाँ स्त्रियों की आध्यात्मिक भागीदारी ने सामाजिक सम्मान और स्वतन्त्रता को बढ़ाया।[32]

(ख) **चीन और जापान** : चीन में पाँचवीं शताब्दी से भिक्षुणी सङ्घ स्थापित हुआ। स्त्रियों ने बौद्ध शिक्षा, अनुवाद और सामाजिक सेवा में महत्वपूर्ण योगदान दिया। जापान में भिक्षुणियाँ न केवल ध्यान साधना करती थीं, बल्कि संगीत, नाट्य और चित्रकला जैसी सांस्कृतिक गतिविधियों में भी भागीदार बनीं।[33]

(ग) **तिब्बत** : तिब्बत में योगिनियाँ और तांत्रिक साधिकाएँ बौद्ध धर्म की आध्यात्मिक और सांस्कृतिक परम्परा का महत्वपूर्ण अङ्ग बनीं। आज भी तिब्बती भिक्षुणियाँ उच्च धार्मिक पदों पर प्रतिष्ठित हैं। उन्होंने स्त्री-मुक्ति के वैश्विक आयामों को स्पष्ट किया और आधुनिक स्त्री-समानता आन्दोलनों में प्रेरणा स्रोत बने।[34]

(घ) **आधुनिक स्त्री-मुक्ति आन्दोलन में बौद्ध दृष्टिकोण** : वर्तमान समय में स्त्री-मुक्ति के आन्दोलन में बौद्ध दृष्टिकोण महत्वपूर्ण प्रेरणा देता है। बुद्ध का यह विचार कि स्त्रियाँ पुरुषों के समान निर्वाण और आध्यात्मिक उपलब्धि प्राप्त कर सकती हैं, वैश्विक स्तर पर लैङ्गिक समानता और मानवाधिकार के सिद्धान्तों को पुष्ट करता है। बौद्ध स्त्री-साधक न केवल आध्यात्मिक जीवन में स्वतन्त्र हैं, बल्कि वे शिक्षा, समाज सेवा और सांस्कृतिक संरक्षण में भी सक्रिय भूमिका निभाती हैं। इस दृष्टि से बौद्ध धर्म न केवल भारत, बल्कि वैश्विक परिप्रेक्ष्य में स्त्री-समानता और स्त्री-मुक्ति का मॉडल प्रस्तुत करता है।[35]

बौद्ध धर्म ने स्त्रियों को केवल पारम्परिक गृहस्थ भूमिकाओं तक सीमित नहीं रखा, बल्कि उन्हें आध्यात्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और अप्रत्यक्ष राजनीतिक क्षेत्रों में सक्रिय भागीदारी का अवसर प्रदान किया। भिक्षुणियों की सङ्घ व्यवस्था, थेरीगाथा की कवयित्रियाँ, भिक्षुणियों की शिक्षा और वैश्विक स्तर पर स्त्रियों की सक्रिय भागीदारी, ये सभी स्त्री-मुक्ति के वैश्विक आयाम को उजागर करते हैं।

बौद्ध दृष्टिकोण यह सिखाता है कि लैङ्गिक भेदभाव और सामाजिक पितृसत्ता के बावजूद स्त्रियों को समान अवसर उपलब्ध कराना सम्भव है। बुद्ध के शिक्षाओं का वैश्विक प्रसार आज भी स्त्रियों के आध्यात्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक उत्थान में प्रेरणा का स्रोत बना हुआ है। इस प्रकार, बौद्ध धर्म केवल आध्यात्मिक मार्ग का परिचायक नहीं, बल्कि स्त्रियों के सामाजिक-वैश्विक उत्थान का मार्गदर्शक भी है।

निष्कर्ष

बौद्ध धर्म में स्त्री-मुक्ति के वैश्विक आयाम यह स्पष्ट करते हैं कि स्त्रियों को केवल पारम्परिक भूमिकाओं तक सीमित न रखकर उन्हें आध्यात्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और अप्रत्यक्ष राजनीतिक क्षेत्रों में सक्रिय भागीदारी दी जा सकती है।

महापजापति गोतमी, अम्बपाली, विसाखा, पटाचारा, किसागोतमी और अन्य भिक्षुणियाँ इस परिवर्तन की जीवित प्रतीक हैं। उनके योगदान ने बौद्ध धर्म को स्त्रियों के उत्थान और मुक्ति के दृष्टिकोण से विशिष्ट बनाया।

आज भी बौद्ध शिक्षाएँ वैश्विक स्तर पर स्त्री-मुक्ति और लैङ्गिक समानता का प्रेरक स्रोत बनी हुई हैं। यह दर्शाता है कि धार्मिक दृष्टि से समान अवसर उपलब्ध कराना और सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक क्षेत्रों में स्त्रियों को सक्रिय बनाना सम्भव है।

References/सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अङ्गुत्तरनिकायपालि. द्वारिकादासशास्त्री (सं.). भाग-3. बौद्धभारती, वाराणसी, 2009.
2. पाचित्तियपालि. कश्यप (सं.). नव नालन्दा महाविहार, नालन्दा, 2017.
3. चुल्लवग्गपालि. द्वारिकादासशास्त्री (सं.). बौद्धभारती, वाराणसी, 2008.
4. थेरीगाथा. भरत सिंह उपाध्याय (अनु.). गौतम बुक सेंटर, दिल्ली, 2010.
5. दीघनिकायपालि. द्वारिकादासशास्त्री (सं.). भाग-2. बौद्धभारती, वाराणसी, 2009.
6. दीघनिकायपालि. द्वारिकादासशास्त्री (सं.). भाग-3. बौद्धभारती, वाराणसी, 2009.
7. मनुस्मृति. जॉर्ज ब्यूलर (अनु.). क्लेरेन्डन प्रेस, ऑक्सफ़ोर्ड, 1886.
8. संयुत्तनिकायपालि. द्वारिकादासशास्त्री (सं.). भाग-1. बौद्धभारती, वाराणसी, 2008.
9. आराइ, पाउला केन रॉबिन्सन. विमेन लिविंग ज़ेन: जापनीज़ सोतो बुद्धिस्ट नन्स. ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2012.
10. गायत्सो, जनेट तथा हन्ना हवनेविक (सं.). विमेन इन तिब्बत: पास्ट ऐंड प्रेज़ेंट. कोलम्बिया यूनिवर्सिटी प्रेस, 2006.
11. टोमलिन, एम्मा. “द थाई भिक्षुणी मूवमेंट ऐंड विमेन्स एम्पावरमेंट.” जेंडर ऐंड डेवलपमेंट, खंड-14, अंक-3, टेलर ऐंड फ़्रांसिस लिमिटेड, ऑक्सफ़ोर्डशायर (यू.के.), 2006.
12. त्सोमो, कर्मा लेक्सहे (सं.). बुद्धिस्ट फ़ेमिनिज़्म्स ऐंड फ़ेमिनिनिटीज़. स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ़ न्यूयॉर्क प्रेस, 2019.
13. त्सोमो, कर्मा लेक्सहे (सं.). बुद्धिस्ट वीमेन ऐंड सोशल जस्टिस: आइडियल्स, चैलेंजेज़ ऐंड अचीवमेंट्स. स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ़ न्यू यॉर्क प्रेस, 2004.
14. हवनेविक, हन्ना. तिबेटन बुद्धिस्ट नन्स: हिस्ट्री, कल्चरल नॉर्म्स ऐंड सोशल रियैलिटी. नॉर्वेजियन यूनिवर्सिटी प्रेस, 1989.

15. Sivasai, C. V. (2024). The position of women during the pre-Buddhist period. Bodhi-Path, 27(2), 39–47.
16. Singhal, S. (2025). The role of women in ancient Indian history: A re-evaluation. Bodhi-Path, 29, 5–10.
17. Nirbhay, D. K. (2025). बुद्ध-धम्म के उत्थान में बिहार की महान् भिक्खुनियों एवं उपासिकाओं का योगदान Bodhi-Path, 29, 49–61.

EndNotes

[1] मनुस्मृति, बुह्लर (अनु.), अध्याय-9, श्लोक-3, 1886, पृ. 320-21.
[2] चुल्लवग्गपालि, द्वारिकादासशास्त्री (सं.), 2008, पृ. 576.
[3] वही, पृ. 574.
[4] थेरीगाथा, उपाध्याय (अनु.), 2010, पृ. 7-120.
[5] वही, पृ. 64.
[6] वही, पृ. 73.
[7] संयुत्तनिकायपालि, द्वारिकादासशास्त्री, 2008, भाग-1, पृ. 54.
[8] ‘‘यस्स एतादिसं यानं, इत्थिया पुरिसस्स वा।
स वे एतेन यानेन, निब्बानस्सेव सन्तिके’’ति॥
[संयुत्तनिकायपालि, द्वारिकादासशास्त्री (सं.), भाग-1, 2008, पृ. 54.]
[9] चुल्लवग्गपालि, द्वारिकादासशास्त्री (सं.), 2008, पृ. 574.
[10] थेरीगाथा, उपाध्याय (अनु.), 2010, पृ. 7-120.
[11] वही, पृ. 64.
[12] वही, पृ. 73.
[13] वही, पृ. 37-40.
[14] चुल्लवग्गपालि, द्वारिकादासशास्त्री (सं.), 2008, पृ. 602-07.
[15] दीघनिकायपालि, द्वारिकादासशास्त्री, भाग-3, 2009, पृ. 745.
[16] थेरीगाथा, उपाध्याय (अनु.), 2010, पृ. 7-120.
[17] चुल्लवग्गपालि, द्वारिकादासशास्त्री (सं.), 2008, पृ. 570-626.
[18] अङ्गुत्तरनिकायपालि, द्वारिकादासशास्त्री, भाग-3, 2009, पृ. 442-44.
[19] चुल्लवग्गपालि, द्वारिकादासशास्त्री (सं.), 2008, पृ. 596-97.
[20] दीघनिकायपालि, द्वारिकादासशास्त्री, भाग-2, 2009, पृ. 355.
[21] वही.
[22] अङ्गुत्तरनिकायपालि, द्वारिकादासशास्त्री, भाग-3, 2009, पृ. 442-44.
[23] पाचित्तियपालि, कश्यप (सं.), 2017, पृ. 283-490.
[24] थेरीगाथा, उपाध्याय (अनु.), 2010, पृ. 7-120.
[25] वही, पृ. 40-42.
[26] गायत्सो तथा हवनेविक (सं.), विमेन इन तिब्बत: पास्ट ऐंड प्रेज़ेंट, 2006.

[27] संयुत्तनिकायपालि, द्वारिकादासशास्त्री (सं.), भाग-1, 2008, पृ. 54.

[28] चुल्लवग्गपालि, द्वारिकादासशास्त्री (सं.), 2008, पृ. 602.

[29] थेरीगाथा, उपाध्याय (अनु.), 2010, पृ. 7-120.

[30] वही, पृ. 64.

[31] चुल्लवग्गपालि, द्वारिकादासशास्त्री (सं.), 2008, पृ. 602-07.

[32] टोमलिन, द थाई भिक्षुणी मूवमेंट ऐंड विमेन्स एम्पावरमेंट, 2006, पृ. 1–18.

[33] आराइ, विमेन लिविंग ज़ेन: जापनीज़ सोतो बुद्धिस्ट नन्स, 2012, पृ. 3–30.

[34] हवनेविक, तिबेटन बुद्धिस्ट नन्स: हिस्ट्री, कल्चरल नॉर्म्स ऐंड सोशल रियैलिटी, 1989.

[35] त्सोमो (सं.), बुद्धिस्ट वीमेन ऐंड सोशल जस्टिस: आइडियल्स, चैलेंजेज़ एंड अचीवमेंट्स, 2004, पृ. 233; त्सोमो (सं.), बुद्धिस्ट फ़ेमिनिज़्म्स ऐंड फ़ेमिनिनिटीज़, 2019, पृ. 25-50.